IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 4, May 2026 Impact Factor: 8.2

सनातन धर्म में संस्कार, मूर्ति-पूजा एवं प्रतीकों का पारस्परिक सम्बन्ध तथा समकालीन परिप्रेक्ष्य में उनकी प्रासंगिकता

(संध्या चौधरी[1] एवं प्रो. गोविन्द प्रसाद मिश्र[2])

शोध-सार

भारतीय संस्कृति का आधारभूत तत्त्व धर्म है और धर्म का जीवंत स्वरूप संस्कार, उपासना एवं प्रतीक-चेतना में परिलक्षित होता है। सनातन धर्म में संस्कार मानव-जीवन के परिष्कार एवं आध्यात्मिक उन्नयन के साधन हैं; मूर्ति-पूजा भक्त एवं ईश्वर के मध्य भावात्मक एवं आध्यात्मिक सेतु का कार्य करती है; तथा धार्मिक प्रतीक गूढ़ दार्शनिक सत्यों को सहज एवं अनुभवगम्य बनाते हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में संस्कार, मूर्ति-पूजा एवं प्रतीकों के पारस्परिक सम्बन्ध का दार्शनिक एवं सांस्कृतिक विश्लेषण करते हुए उनकी समकालीन प्रासंगिकता का विवेचन किया गया है। यह प्रतिपादित किया गया है कि ये तीनों तत्त्व केवल धार्मिक कर्मकाण्ड नहीं, अपितु भारतीय सांस्कृतिक चेतना, नैतिक अनुशासन एवं आध्यात्मिक अनुभूति के आधार स्तम्भ हैं। वैश्वीकरण, भौतिकवाद एवं सांस्कृतिक विघटन के वर्तमान युग में इनकी पुनर्व्याख्या एवं पुनर्स्थापना अत्यन्त आवश्यक है।

मुख्य शब्द — संस्कार, मूर्ति-पूजा, प्रतीकवाद, सनातन धर्म, भारतीय संस्कृति, आध्यात्मिकता, धर्मदर्शन।

प्रस्तावना

सनातन धर्म विश्व की प्राचीनतम आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं में से एक है। यह केवल किसी संकीर्ण धार्मिक व्यवस्था का नाम नहीं, अपितु जीवन के समग्र विकास का ऐसा सार्वभौम दर्शन है जिसमें व्यक्ति, समाज, प्रकृति एवं परमात्मा के मध्य समन्वित सम्बन्ध की स्थापना की गयी है। भारतीय

[1] - लघु शोध छात्रा – दर्शनशास्त्र विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, म.प्र.

[2] - प्रोफ़ेसर - दर्शनशास्त्र विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, म.प्र.

Copyright to IJARSCT
www.ijarsct.co.in
DOI: 10.48175/568

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 4, May 2026
Impact Factor: 8.2

मनीषा ने मानव-जीवन को केवल जैविक सत्ता न मानकर एक आध्यात्मिक यात्रा के रूप में स्वीकार किया है। इसी कारण यहाँ धर्म का उद्देश्य केवल उपासना-पद्धति तक सीमित न होकर "अभ्युदय" एवं "निःश्रेयस" दोनों की प्राप्ति माना गया है। वैशेषिक दर्शन में धर्म की परिभाषा करते हुए महर्षि कणाद कहते हैं—

"यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः।"[3]

अर्थात् जिससे लौकिक उन्नति तथा पारलौकिक कल्याण की सिद्धि हो, वही धर्म है।

सनातन धर्म की सम्पूर्ण संरचना संस्कार, साधना एवं प्रतीक-व्यवस्था पर आधारित है। संस्कार व्यक्ति के आचरण को परिष्कृत करते हैं; मूर्ति-पूजा उसकी भावनात्मक एवं आध्यात्मिक चेतना को जाग्रत करती है; और प्रतीक धर्म के अमूर्त सत्यों को दृश्य एवं अनुभवसिद्ध बनाते हैं। इन तीनों का समन्वय भारतीय संस्कृति को केवल वैचारिक नहीं, बल्कि व्यवहारिक एवं अनुभूतिपरक स्वरूप प्रदान करता है।

वर्तमान समय में जब उपभोक्तावाद, नैतिक अवमूल्यन एवं सांस्कृतिक विखण्डन की प्रवृत्तियाँ तीव्र हो रही हैं, तब सनातन धर्म की संस्कार-परम्परा एवं प्रतीक-चेतना की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है। प्रस्तुत शोधपत्र इसी संदर्भ में संस्कार, मूर्ति-पूजा एवं प्रतीकों के पारस्परिक सम्बन्ध तथा उनके समकालीन महत्त्व का विवेचन करता है।

1. संस्कार : मानव-जीवन के आध्यात्मिक परिष्कार की प्रक्रिया

'संस्कार' शब्द भारतीय संस्कृति का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण दार्शनिक एवं सांस्कृतिक पद है। व्युत्पत्तिगत दृष्टि से 'संस्कार' का अर्थ है—सम्यक् परिष्कार, शुद्धि अथवा उत्कृष्ट निर्माण। मीमांसा दर्शन में संस्कार की परिभाषा इस प्रकार दी गयी है—**"संस्कारो नाम स भवति यस्मिञ्जाते पदार्थो भवति योग्यः कस्यचिदर्थस्य।"**[4]

अर्थात् संस्कार वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई वस्तु अथवा व्यक्ति किसी विशिष्ट उद्देश्य के लिए योग्य बनता है। भारतीय जीवन-दर्शन में मनुष्य जन्म से पूर्ण नहीं माना गया; वह संस्कारों के माध्यम से क्रमशः परिपूर्णता की ओर अग्रसर होता है।

---

[3] -वैशेषिकसूत्र 1/1/2

[4] -जैमिनि मीमांसा सूत्र 3/1/3

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 4, May 2026 Impact Factor: 8.2

मनुस्मृति में स्पष्ट कहा गया है— **"जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते।"**[5] यहाँ 'द्विज' का अभिप्राय आध्यात्मिक पुनर्जन्म से है। संस्कार मनुष्य को केवल सामाजिक सदस्य नहीं बनाते, बल्कि उसे नैतिक एवं आध्यात्मिक चेतना से सम्पन्न करते हैं। गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि तक वर्णित षोडश संस्कार भारतीय संस्कृति की जीवन-दृष्टि का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रत्येक संस्कार मानव-जीवन के किसी न किसी महत्त्वपूर्ण चरण से सम्बद्ध है और उसके शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास को दिशा प्रदान करता है।

उपनयन संस्कार ज्ञान एवं अनुशासन का प्रतीक है; विवाह संस्कार सामाजिक उत्तरदायित्व एवं धर्मपालन का; तथा अन्त्येष्टि संस्कार जीवन की अनित्यता एवं आत्मा की अमरता का बोध कराता है। इस प्रकार संस्कार केवल धार्मिक अनुष्ठान न होकर मानव-निर्माण की सांस्कृतिक प्रक्रिया हैं। तैत्तिरीय उपनिषद् में गुरु अपने शिष्य को उपदेश देता है— **"सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः।"**[6] यह उपदेश संस्कारों के मूल उद्देश्य को उद्घाटित करता है—सत्य, धर्म एवं स्वाध्याय पर आधारित जीवन।

2. मूर्ति-पूजा : सगुणोपासना का दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक आधार

सनातन धर्म में परमात्मा को निर्गुण एवं सगुण दोनों रूपों में स्वीकार किया गया है। उपनिषद् ब्रह्म को निराकार, अव्यक्त एवं अनिर्वचनीय बताते हैं— **"नेति नेति।"**[7]

किन्तु सामान्य मनुष्य के लिए निराकार सत्ता का ध्यान सहज नहीं है। भगवद्गीता में भगवान् कृष्ण स्वयं स्वीकार करते हैं—**"क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्।"**[8]

अर्थात् अव्यक्त निराकार की उपासना देहधारी प्राणियों के लिए अत्यन्त कठिन है।

इसी कारण भारतीय आध्यात्मिक परम्परा में मूर्ति-पूजा का विकास हुआ। मूर्ति यहाँ ईश्वर का सीमित रूप नहीं, बल्कि उसकी अनुभूति का प्रतीकात्मक माध्यम है। भक्त मूर्ति में पत्थर या धातु नहीं देखता, बल्कि ईश्वर की दिव्य सत्ता का अनुभव करता है।

नारद पाञ्चरात्र में कहा गया है— **"अर्चायां हि हरये पूजां श्रद्धयेहते।"**[9]

---

[5] -मनुस्मृति 2/146

[6] -तैत्तिरीय उपनिषद् 1/11

[7] -बृहदारण्यक उपनिषद् 2/3/6

[8] भगवद्गीता 12/5

अर्थात् श्रद्धा से की गयी प्रतिमा-पूजा वस्तुतः भगवान् की ही पूजा है।

मूर्ति-पूजा का गहन मनोवैज्ञानिक आधार भी है। मानव-मस्तिष्क दृश्य प्रतीकों एवं रूपों के माध्यम से शीघ्र एकाग्र होता है। प्रतिमा मन को स्थिरता प्रदान करती है तथा ध्यान एवं भक्ति का केन्द्र बनती है। यही कारण है कि मंदिर भारतीय समाज में केवल पूजा-स्थल नहीं, बल्कि आध्यात्मिक, सांस्कृतिक एवं कलात्मक चेतना के केन्द्र रहे हैं।

स्वामी विवेकानन्द ने मूर्ति-पूजा की सार्थकता स्पष्ट करते हुए कहा था कि यदि कोई व्यक्ति राष्ट्रध्वज को राष्ट्र का प्रतीक मानकर सम्मान दे सकता है, तो मूर्ति को ईश्वर का प्रतीक मानकर पूजा करना भी तर्कसंगत है। इस प्रकार मूर्ति-पूजा प्रतीकात्मक चेतना का ही एक उन्नत रूप है।

3. धार्मिक प्रतीक : आध्यात्मिक सत्यों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति

मानव सभ्यता के विकास में प्रतीकों की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रही है। प्रतीक अमूर्त एवं गूढ़ सत्यों को मूर्त एवं अनुभवगम्य बनाते हैं। सनातन धर्म में प्रतीकवाद का अत्यन्त समृद्ध स्वरूप प्राप्त होता है।

(क) ॐ : ब्रह्म का ध्वनि-प्रतीक

माण्डूक्य उपनिषद् में कहा गया है कि 'ॐ' सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की आदिध्वनि एवं ब्रह्म का प्रतीक माना गया है। यह सृष्टि, स्थिति एवं लय का प्रतिनिधित्व करता है- **"ॐ इत्येतदक्षरमिदं सर्वम्।"**[10]

(ख) स्वस्तिक : मंगल एवं समन्वय का प्रतीक

स्वस्तिक भारतीय संस्कृति में कल्याण, समृद्धि एवं सकारात्मक ऊर्जा का प्रतीक है। इसकी चार भुजाएँ धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष का द्योतन करती हैं।

(ग) दीप : ज्ञान एवं चेतना का प्रतीक

दीप अज्ञान से ज्ञान की ओर अग्रसर होने का प्रतीक है। भारतीय संस्कृति में दीप प्रज्ज्वलन केवल अनुष्ठान नहीं, बल्कि चेतना के आलोक का प्रतीकात्मक उद्घोष है। **"तमसो मा ज्योतिर्गमय।"**[11]

---

[9] -नारद पाञ्चरात्र

[10] -माण्डूक्य उपनिषद्-1

[11] -बृहदारण्यक उपनिषद् 1/3/28

(घ) शिवलिंग : सृष्टि एवं अनन्त चेतना का प्रतीक –

शिवलिंग को केवल लौकिक दृष्टि से देखना उसकी दार्शनिक गहराई की अवहेलना है। यह निराकार ब्रह्म एवं सृष्टि-तत्त्व का प्रतीक है। लिंगपुराण में शिवलिंग को अनन्त ब्रह्माण्डीय ऊर्जा का प्रतीक माना गया है।

(ङ) कमल : वैराग्य एवं पवित्रता का प्रतीक

कमल संसार में रहते हुए भी आसक्ति से मुक्त रहने की शिक्षा देता है। भगवद्गीता में कहा गया है कि जैसे कमलपत्र जल में रहते हुए भी उससे लिप्त नहीं होता, वैसे ही मनुष्य को संसार में रहकर भी आसक्ति से मुक्त रहना चाहिए- **"पद्मपत्रमिवाम्भसा।"** [12]

4. संस्कार, मूर्ति-पूजा एवं प्रतीकों का पारस्परिक सम्बन्ध

सनातन धर्म में संस्कार, मूर्ति-पूजा एवं प्रतीक परस्पर पूरक तत्त्व हैं। संस्कारों में प्रतीकों एवं देवमूर्तियों का व्यापक प्रयोग होता है। विवाह संस्कार में अग्नि साक्षी के रूप में उपस्थित रहती है; उपनयन में यज्ञोपवीत ज्ञान एवं उत्तरदायित्व का प्रतीक है; तथा अन्त्येष्टि में अग्नि आत्मा की शुद्धि एवं मोक्ष का द्योतक है।

ऋग्वेद का प्रथम मन्त्र अग्नि को देवताओं एवं मनुष्यों के मध्य सेतु के रूप में प्रस्तुत करता है— **"अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।"**[13]

इसी प्रकार मूर्ति-पूजा में प्रयुक्त शंख, चक्र, गदा, पद्म आदि केवल अलंकरण नहीं, बल्कि दैवी शक्तियों के प्रतीक हैं।

संस्कार व्यक्ति के आचरण को शुद्ध करते हैं; मूर्ति-पूजा उसकी भावनात्मक चेतना को परिष्कृत करती है; तथा प्रतीक उसकी आध्यात्मिक अनुभूति को जाग्रत करते हैं। इस प्रकार ये तीनों मिलकर धर्म को केवल सिद्धान्त न रहने देकर जीवनानुभव में परिणत करते हैं।

5. समकालीन परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता

आधुनिक युग में विज्ञान एवं तकनीक के अभूतपूर्व विकास के बावजूद मानव मानसिक तनाव, नैतिक विघटन एवं सांस्कृतिक संकट से ग्रस्त है। ऐसे समय में सनातन धर्म की संस्कार-परम्परा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो उठती है।

---

[12] -भगवद्गीता 5/10

[13] -ऋग्वेद 1/1/1

(क) नैतिक मूल्यों का संरक्षण

संस्कार व्यक्ति में अनुशासन, संयम एवं उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न करते हैं। आज जब परिवार एवं समाज में नैतिक संकट गहरा रहा है, तब संस्कारों की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है।

(ख) मानसिक स्वास्थ्य एवं आध्यात्मिक संतुलन

मूर्ति-पूजा, ध्यान एवं मंत्र-जप मानसिक शान्ति प्रदान करते हैं। आधुनिक मनोविज्ञान भी स्वीकार करता है कि प्रतीकात्मक एवं ध्यानात्मक प्रक्रियाएँ तनाव-नियन्त्रण में सहायक हैं।

(ग) सांस्कृतिक अस्मिता का संरक्षण

वैश्वीकरण के युग में सांस्कृतिक पहचान का संकट उत्पन्न हो रहा है। धार्मिक प्रतीक भारतीय सांस्कृतिक चेतना एवं परम्परा के वाहक हैं।

(घ) पर्यावरणीय चेतना

सनातन धर्म प्रकृति को पूज्य मानता है। अथर्ववेद में पृथ्वी के प्रति श्रद्धा व्यक्त की गयी है—

"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।"[14]

यह दृष्टि आधुनिक पर्यावरणीय संकट के समाधान में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

(ङ) वैश्विक मानवता एवं समन्वय

सनातन धर्म का मूल संदेश सार्वभौमिकता एवं समन्वय है। महा-उपनिषद् का प्रसिद्ध वाक्य—

"वसुधैव कुटुम्बकम्।"[15] आज के वैश्विक संघर्ष एवं विभाजन के युग में अत्यन्त प्रासंगिक प्रतीत होता है।

उपसंहार

संस्कार, मूर्ति-पूजा एवं प्रतीक सनातन धर्म की त्रिविध आधारशिलाएँ हैं। ये केवल धार्मिक कर्मकाण्ड नहीं, बल्कि भारतीय जीवन-दर्शन की जीवंत अभिव्यक्तियाँ हैं। संस्कार मानव-व्यक्तित्व का परिष्कार करते हैं; मूर्ति-पूजा ईश्वर के प्रति भावात्मक एवं आध्यात्मिक सम्बन्ध स्थापित करती है; तथा प्रतीक अमूर्त दार्शनिक सत्यों को जनसामान्य के लिए ग्राह्य बनाते हैं।

इन तीनों का समन्वय भारतीय संस्कृति को आध्यात्मिक गहराई, नैतिक अनुशासन एवं सांस्कृतिक निरन्तरता प्रदान करता है। समकालीन युग की चुनौतियों—भौतिकवाद, नैतिक अवमूल्यन, सांस्कृतिक

---

[14] -अथर्ववेद 12/1/12

[15] -महोपनिषद् 6/71

विखण्डन एवं मानसिक तनाव—के समाधान हेतु इन परम्पराओं का पुनर्पाठ एवं पुनर्स्थापन अत्यन्त आवश्यक है।

अतः यह कहा जा सकता है कि सनातन धर्म की संस्कार-परम्परा, मूर्ति-पूजा एवं प्रतीक-चेतना केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि वर्तमान एवं भविष्य की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दिशा भी हैं।